P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-5* ISSUE-7* March- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

राज्यों में राष्ट्रपति शासनः एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

महेन्द्र प्रताप बाँयला
सह आचार्य,
राजनीति विज्ञान विभाग,
बाबू शोभाराम राजकीय कला महाविद्यालय,
अलवर, राजस्थान

सारांश

भारतीय संविधान में संघात्मक शासन व्यवस्था अपनायी गयी है यद्यपि संविधान में संघवाद शब्द का इस्तेमाल कहीं नहीं किया गया है। संविधान के अनुच्छेद 1 में लिखा गया है कि भारत राज्यों का संघ होगा। यहाँ संघ के लिए अंग्रेजी पर्याय 'फेडरेशन' के स्थान पर 'यूनियन' शब्द का प्रयोग किया गया है।

भारत में संघात्मक शासन होने के कारण संघीय सरकारों को दोहरा दायित्व सौंपा गया है। एक ओर संघीय सरकार को यह दायित्व दिया गया है कि वह प्रत्येक राज्य की बाहरी आक्रमण तथा आन्तरिक अषान्ति से रक्षा करेगा। दूसरी ओर, संविधान के अनुच्छेद 355 के अनुसार संघ सरकार का यह दायित्व है कि वह यह सुनिश्चित करें कि सभी राज्य सरकारें संविधान के उपबन्धों के अनुसार चल रही हैं या नहीं।

यदि राष्ट्रपति को यह समाधान हो जाता है कि किसी राज्य का संवैधानिक तन्त्र विफल हो गया है तो राष्ट्रपति अपनी मंत्रिपरिषद् की सलाह पर अनुच्छेद 356 के तहत् उस राज्य में राष्ट्रपति शासन लागू कर सकता है। राष्ट्रपति का यह समाधान राज्यपाल से प्रतिवेदन मिलने पर हो सकता है या अन्य स्रोत से हो सकता है।

अनुच्छेद 365 के अनुसार राष्ट्रपति किसी राज्य सरकार के विरूद्ध अनुच्छेद 356 का प्रयोग उस समय भी कर सकता है, जब किसी संघीय निर्देश का अनुपालन और प्रवर्तन करने में सम्बद्ध राज्य सरकार असफल रहती है।

मुख्य शब्द : राज्य, राष्ट्रपति शासन, संविधान, अनुच्छेद 356, संघात्मक, शासन, आपातकाल।

प्रस्तावना

संविधान के अनुसार संघीय सरकार को यह उत्तरदायित्व सौंपा गया है कि वह प्रत्येक राज्य की बाहरी आक्रमण तथा आन्तरिक अशान्ति से रक्षा करेगा तथा यह सुनिश्चित करेगा कि प्रत्येक राज्य की सरकार संविधान क उपबन्धों के अनुसार चलाई जाए। अनुच्छेद 356 के अनुसार अगर राष्ट्रपति को राज्यपाल के प्रतिवेदन पर या अन्य किसी प्रकार से समाधान हो जाए कि ऐसी परिस्थितियां पैदा हो गई है कि किसी राज्य का शासन संविधान के उपबन्धें के अनुसार नहीं चलाया जा सकता है, तो वह संकटकाल की घोषणा कर सकता है।

मूल संविधान के अनुसार संसद के द्वारा एक बार प्रस्ताव पास कर राज्य में 6 माह के लिए राष्ट्रपति शासन लागू किया जा सकता था, 42वें संवैधानिक संशोधन द्वारा इस अवधि को एक वर्ष कर दिया गया था, 44 वें सांवैधानिक संशोधान द्वारा इस अवधि को पुन 6 माह कर दिया गया है। 44वें सांवैधानिक संशोधन से पूर्व राज्य में राष्ट्रपति शासन की अधिकतम अवधि तीन वर्ष थी, लेकिन अब इस व्यवस्था में यह परिवर्तन किया गया है कि राज्य में राष्ट्रपति शासन के एक वर्ष की अवधि के बाद इसे और अधिक समय के लिए जारी रखने का प्रस्ताव संसद द्वारा तभी पारित किया जा सकेगा, जबकि इस प्रकार का प्रस्ताव पारित किए जाने के समय अनुच्छेद 352 के अन्तर्गत संकटकाल लागू हो अथवा चुनाव आयोग यह प्रमाणित कर दे कि राज्य में चुनाव करवाना सम्भव नहीं है।

भिन्न–भिन्न राज्यों में राष्ट्रपति शासन लागू किए जाने की राजनीतिक परिस्थितियाँ विभिन्न रही हैं। मुख्यमन्त्रियों, राज्य विधानसभाओं तथा राज्यपालों का आचरणगत व्यवहार भी एक समान नहीं रहा है। स्वतन्त्रता के बाद केन्द्र में सत्तारूढ़ होने वाली केन्द्र सरकारों ने भी अपने दलीय हितों को दृष्टिगत रखकर राज्यों में राष्ट्रपति शासन लागू करने के निर्णयों के कारण प्रधानमन्त्रियों, केन्द्रीय मन्त्रीपरिषद, तथा राज्यपालों को व्यापक आलोचना का पात्र बनना पड़ा है। भारतीय संसद, राज्य विधानसभाओं, सार्वजनिक मंचों तथा सभाओं में उनकी व्यापक अलोचना भी हुई ।

अध्ययन का उद्देश्य

प्रस्तुत शोधपत्र का मुख्य उद्देश्य भारतीय संविधान के अनुच्छेद 356 के अनुसार राज्यों में सांवैधानिक शासन की विफलता के बाद राज्यपाल की सिफारिश पर राष्ट्रपति द्वारा लागू की जाने वाली संकटकाल की घोषणा का विस्तृत अध्ययन करना है।

अतः इस शोधपत्र में राज्यों में राष्ट्रपति शासन लागू किये जाने के कारणों, प्रभावों तथा इसके राजनीतिक मायनों का अध्ययन करते हुए, इसके लागू करने के सन्दर्भ में कुछ सार्थक सुझावों की भी यहाँ व्याख्या की गयी है।

शोध–पद्धति

वर्तमान शोधपत्र में शोध अध्ययन से सम्बन्धित सामग्री एकत्रित करने के लिए प्राथमिक तथा द्वितीयक दोनों प्रकार की शोध पद्धतियों को अपनाया गया है। राज्यों में राष्ट्रपति शासन के अध्ययन से सम्बन्धित सामग्री, महत्वपूर्ण विद्वानों की पुस्तकें, समय–समय पर केन्द्र–राज्य सम्बन्धों पर गठित आयोगों एवं समितियों के प्रतिवेदन, शोधपत्रों में प्रकाशित आलेख, समाचार पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित सम्पादकीय एवं आलेखों का अध्ययन किया गया है। इन्हीं के आधार पर यह जानने का प्रयास किया गया है कि राज्यों में राष्ट्रपति शासन लागू करते समय कितना राजनीतिक भेदभाव किया जाता है और इसे रोकने हेतु क्या–क्या कदम उठाये जा सकते है।

साहित्यावलोकन

भारत में राज्यों में राष्ट्रपति शासन, के संदर्भ में किये गये इस शोध के उद्देश्यों तथा शोध–पद्धति का विवरण प्रस्तुत करते हुए इस विषय पर लिखे गये साहित्य का अवलोकन, विश्लेषण तथा मूल्यांकन किया गया है। यथा–

धर्मचन्द जैन द्वारा लिखित पुस्तक 'राज्यों में राष्ट्रपति शासनः एक विश्लेषणात्मक अध्ययन; भाग–1' (2004) में राज्यों में राष्ट्रपति शासन के प्रयोग की परिस्थितियों का समीक्षात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। इस खण्ड में आन्ध्र प्रदेश, असम, बिहार, गोवा, गुजरात, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, जम्मू–कश्मीर, कर्नाटक, केरल, मध्य–प्रदेश तथा महाराष्ट्र में स्वतंत्रता से लेकर सन् 2004 तक लागू किये जाने वाले राष्ट्रपति शासन का समीक्षात्मक अध्ययन प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

एम.लक्ष्मीकांत ने अपनी रचना 'भारत की राजव्यवस्था' (2016) में 76 अध्यायों तथा 18 परिशिष्टों को समाविष्ट करते हुए भारतीय राजव्यवस्था एवं सांवैधानिक क्रियाकलापों का पूर्ण विवेचन प्रस्तुत किया है। इस पुस्तक में भारत के गैर–सांवैधानिक निकायों पर एक पृथक से खंड जोड़ा गया है

सुभाष कश्यप द्वारा लिखित रचना 'दल–बदल और राज्यों की राजनीति' (1970) में बताया गया है कि किसी राज्य में कुछ नेताओं द्वारा दल–बदल करने से उस राज्य की राजनीति में व्यापक रूप से बदलाव आ जाता है और यह एक स्वस्थ लोकतंत्र के लिए उपयुक्त नहीं है।

एस. एस. सईद ने अपनी कृति 'भारतीय राजनीतिक व्यवस्था' (2009) में भारतीय राजनीति और शासन के बदलते हुए स्वरूप का अनुभवात्मक अध्ययन किया है। लेखक ने बताया है कि पिछले छः दशकों में भारतीय राजनीति और शासन व्यवस्था में कुछ ऐसे आमू परिवर्तन हुए है जिनकी कल्पना भी नहीं की जा सकती थी, विशेषकर 1967 के बाद से भारतीय राजनीति में कुछ नए मोड़ आए, जैसे देश में एक दलीय प्रभुत्व का अन्त, उसकी पुर्नस्थापना तथा 1990 में उसका पुनः अन्त; देश व राज्यों में मिश्रित सरकारों की स्थापना, केन्द्र और राज्यों के बीच गंभीर विवाद, राज्यों में बार–बार राष्ट्रपति शासन की स्थापना, संविधान में बड़ी संख्या में मूलभूत संशोधन, संसद व न्यायपालिका के बीच टकराव आदि ऐसी घटनाएँ है जिन्होंने भारतीय राजनीति और शाासन के मूल स्वरूप को बहुत अधिक प्रभावित किया है।

सुभाष कश्यप ने अपनी रचना 'सांवैधानिक–राजनीतिक व्यवस्था' (2016) में बताया है कि भारत लोकतंत्र जैसे–जैसे युवा से प्रौढ़ होने की दिशा में बढ़ रहा है, नित नए सायास–अनायास उपक्रमों के माध्यम से जनसाधारण की राजनीतिक चेतना भी विकसित हो रही है। इस पुस्तक में भारत की राजनीतिक व्यवस्था, उसके उद्भव, विकास, संरचना और वर्तमान पर केन्द्रित विस्तृत सामग्री के अलावा जर्मनी, ब्रिटेन, फ्रांस, रूस, आस्ट्रेलिया, संयुक्त राज्य अमेरिका और चीन की राजनीतिक व्यवस्थाओं के विषय में तथ्यात्मक जानकारी दी गई है।

जय नारायण पाण्डेय द्वारा लिखित कृति 'भारत का संविधान'(2017) में भारतीय संविधान की विशेषताओं, नैतिक आदर्शों, सभी अनुच्छेदों की विस्तृत व्याख्या की गई है तथा इस पुस्तक में संविधान के सैद्वान्तिक पक्ष के साथ–साथ संविधान के व्यवहारिक पक्ष पर भी प्रकाष डाला गया है।

उपर्युक्त विवेचन द्वारा शोध विषय से सम्बन्धित साहित्य की समीक्षा करने का प्रयास किया गया है। समय तथा अन्य परिस्थितियों की सीमाओं में रहते हुए जो साहित्य सुलभ हो पाये, उन्हीं की यहाँ समीक्षा की गई है।

राज्यों में राष्ट्रपति शासन

भारतीय संविधान के अनुसार भारत एक संघात्मक शासन प्रणाली वाला देश है यद्यपि इसमें केन्द्र, राज्यों की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली है क्योंकि शक्तियों का केन्द्र की ओर झुकाव ज्यादा है। व्यवहाारिक दृष्टि से एकदलीय आधिपत्य और कठोर दलीय अनुशासन के कारण भारतीय संघ में राज्य सरकारें, केन्द्र सरकार के कठोर नियंत्रण में रही है और एक लम्बे काल तक अपने सांवैधानिक क्षेत्र में भी उन्हें स्वतंत्रतापूर्वक कार्य करने का समुचित अवसर नहीं मिल सका। लेकिन वर्तमान गठबंधन सरकारों के युग ने राज्य स्तरीय राजनीतिक दलों के महत्व को बढ़ा दिया है जिससे अब केन्द्र राज्यों को नियंत्रण में नहीं रख पा रहे हैं।

संविधान के अनुच्छेद 352, 356, 360 में आपातकालीन उपबन्धों का उल्लेख किया गया है। आपातकालीन घोषणा के पश्चात् देश का संघीय ढांचा एकात्मक सरकार में परिवर्तित हो जाता है। इस एकात्मक सरकार में परिवर्तित हो जाता है। इस घोषणा के

परिणामस्वरूप केन्द्र सरकार राज्य सरकारों पर नियंत्रण कर लेती है।

संकट की स्थिति का सामना करने के लिए राष्ट्रपति को संविधान द्वारा अनुच्छेद 352, 356 तथा 360 के तहत् विषेष शक्तियाँ दी गई है। यथा– अनुच्छेद 352 के अनुसार राष्ट्रपति युद्ध, बाहरी आक्रमण या सशस्त्र विद्रोह की स्थिति में आपातकाल की घोषणा कर सकता है।

अनुच्छेद 356 के अनुसार राष्ट्रपति को राज्यपाल के प्रतिवेदन पर या अन्य किसी प्रकार से यह समाधान हो जाये कि राज्य का शासन संविधान के अनुसार नहीं चल रहा है तो वह संकटकाल की घोषणा कर सकता है।

अनुच्छेद 360 के अनुसार जब राष्ट्रपति को यह विश्वास हो जाये कि भारत के वित्तीय स्थायित्व या साख को खतरा है, तो वह वित्तीय संकट की घोषणा कर सकता है।

प्रस्तुत शोधपत्र में अनुच्छेद 356 के तहत् राज्यों में लागू होने वाले राष्ट्रपति शासन का अध्ययन करने का प्रयास किया गया है। किसी राज्य में संवैधानिक–तन्त्र की असफलता की स्थिति में अनुच्छेद–356 के अन्तर्गत राज्य में राष्ट्रपति शासन लागू किया जाता है। यह आपातकाल का दूसरा रूप है। इसका आशय यही है कि राज्य प्रषासन का संचालन सांवैधानिक उपबन्धों के अनुरूप करना सम्भव नहीं रहा है। दूसरे शब्दों में, राज्य में असामान्य या असाधारण स्थिति उत्पन्न हो गई है, जिसका समाधान करने के लिए अनुच्छेद–356 का सहारा लिया जाता है।

स्वतन्त्रता के बाद राज्यों में अनुच्छेद–356 का व्यापक प्रयोग किया गया। केन्द्र में सत्तारूढ़ सभी दलों की सरकारों ने इस अनुच्छेद का व्यापक रूप में प्रयोग किया। इस अनुच्छेद का प्रयोग बहुत विवाद तथा आलोचना का विषय बना। इस अनुच्छेद के प्रयोग ने राष्ट्रपति, राज्यपाल तथा केन्द्र में सत्तारूढ़ सरकार की भूमिका का उग्र विवाद का विषय बनाया। उनकी भूमिका की संसद, राज्य विधानसभाओं, सार्वजनिक सभाओं तथा जन साधारण में भी चर्चा हुई।

राज्यों में राष्ट्रपति शासन की अवधि

राज्यों में राष्ट्रपति शासन सामान्यतः दो माह के लिए लागू होता है, किन्तु उद्घोषणा यदि लोकसभा के विघटन के बाद की गई हो अथवा उद्घोषणा के बाद लोकसभा का विघटन हो गया हो तो नवीन लोकसभा के गठन की तिथि के बाद प्रथम बैठक में 30 दिनों के बााद उद्घोषणा तभी प्रवृत्त रहेगी, जब नवीन लोकसभा उसका अनुमोदन कर दे। अनुच्छेद 356 का अनुमोदन दोनों सदनों द्वारा पारित संकल्प से इसका क्रियान्वयन दो माह से अधिक तक भी जारी रखा जा सकता है। यह विस्तार एक बार में अधिकतम 6 माह तक, किन्तु विशेष स्थिति में अधिकतम तीन वर्ष तक के लिए हो सकता है। किन्तु 44 वें संविधान संशोधन द्वारा यह भी निहित किया गया है कि यदि राज्य में राष्ट्रपति शासन की अवधि एक वर्ष से आगे बढ़ानी हो तो इसके लिए दो शर्तों का पूर्ण होना जरूरी है–

1. ऐसे संकल्प के पारित होते समय भारत के सम्पूर्ण या आंषिक भू–भाग में आपातकाल या उस राज्य में राष्ट्रपति शासन प्रवर्तन में है।
2. निर्वाचन आयोग द्वारा यह प्रमाणित किया गया हो कि सम्बद्ध राज्य में निष्पक्ष चुनाव कराना कठिन है।

उक्त दो शर्तों की पूर्ति पर ही राज्यों में राष्ट्रपति शासन की अवधि एक वर्ष से अधिक की जा सकती है।

राज्यों में राष्ट्रपति शासन लागू करने की घोषणा के प्रभाव

राष्ट्रपति द्वारा राज्यों में सांवैधानिक तन्त्र की विफलता पर उद्घोषित आपातकाल के निम्नलिखित प्रभाव होते हैं–

विधायी दृष्टि से

राष्ट्रपति यह घोषित कर सकता है कि किसी राज्य की विधायिका शक्ति का प्रयोग केन्द्रीय संसद करेगी। संसद ऐसे व्यवस्थापन की शक्ति राष्ट्रपति को प्रदान कर सकती है अथवा उसको यह अधिकार दे सकती है कि वह यह शक्ति किसी और अधिकारी को प्रदान कर दे।

उल्लेखनीय है कि अनुच्छेद 356 की उद्घोषणा के पश्चात् यह जरूरी नहीं कि सम्बद्ध राज्य की विधानसभा को भी भंग कर दिया जाए। विधानसभा को केवल निलम्बित भी किया जा सकता है। अनुच्छेद 357 के अनुसार संसद के सत्र में न होने पर राष्ट्रपति सम्बद्ध राज्य के प्रशासन हेतु आवश्यक अध्यादेश जारी कर सकता है।

कार्यपालिका दृष्टि से

राष्ट्रपति राज्य की कार्यपालिका या किसी अन्य प्राधिकार के सभी अथवा आंशिक कृत्यों को हस्तगत कर सकता है। केवल सम्बन्धित राज्य क्षेत्र के उच्च न्यायालय के अधिकार एव कर्तव्य इसके अपवाद हैं।

वित्तीय दृष्टि से

जब लोकसभा की बैठकें नही हो रही हों, उस समय राष्ट्रपति राज्य की संचित निधि से व्यय के लिए आदेश दे सकता है।

संकट की अवधि में

राष्ट्रपति संविधान के अनुच्छेद 19 द्वारा प्रदत्त स्वतन्त्रताओं पर रोक लगा सकता है और उसके जीवन तथा शारीरिक स्वाधीनता के अतिरिक्त अन्य अधिकारों के सम्बन्ध में संवैधानिक उपचारों के अधिकार का भी अन्त किया जा सकता है। किन्तु संविधान के अनुच्छेद 359 के अनुसार राष्ट्रपति अनुच्छेद 20 तथा अनुच्छेद 21 को निलम्बित नहीं कर सकता है।

अनुच्छेद 356 का व्यावहारिक प्रयोग

संविधान के अनुच्छेद 356 का प्रयोग सर्वाधिक विवादास्पद सर्वाधिक रहा है। संविधान लागू होने के बाद अब तक 123 से अधिक बार आपातकाल लगाया जा चुका हैं। संविधान निर्माताओं ने अनुच्छेद 356 के प्रयोग से यह आशा व्यक्त की थी कि इसका असाधारण या अपवाद वाली परिस्थितियों में ही प्रयोग किया जायेगा, किन्तु संविधान निर्माताओं की यह अपेक्षा पूर्ण नहीं हुई। 1967 के चतुर्थ आम चुनावों के पूर्व अनुच्छेद 356 का सीमित

P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-5* ISSUE-7* March- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

तथा इसके पश्चात् व्यापक रूप से इस अनुच्छेद का प्रयोग किया गया था।

1967 के चतुर्थ आम चुनावों से पूर्व अनुच्छेद 356 का प्रयोग करते हुए मुख्यतः 1954 में आन्ध्रप्रदेश, 1956 में ट्रावनकोर–कोचीन, 1959 में केरल, 1961 में ओडिशा, 1964 में केरल और 1966 में पंजाब में राष्ट्रपति शासन लागू किया गया। उक्त राज्यों में लागू किये गये राष्ट्रपति शासन में सर्वाधिक चर्चित केन्द्र सरकार द्वारा केरल में ई.एम.एस. नम्बूदरीपाद के नेतृत्व में साम्यवादी दल की सरकार को बर्खास्त कर राष्ट्रपति शासन लागू करने का निर्णय करना रहा था। विधानसभा में पूर्ण समर्थन प्राप्त इस सरकार को अशान्ति एवं अव्यवस्था के आधार पर बर्खास्त कर दिया गया था। विपक्षी राजनीतिक दलों द्वारा इसे केन्द्र सरकार का राजनीति से प्रेरित होकर किया गया निर्णय बताया गया था।

1967 के पश्चात् अनेक राज्यों में कांग्रेस को पराज्य का सामना करना पड़ा। उसका स्थान गठबन्धनों से निर्मित संविद या संयुक्त मोर्चा सरकारों अथवा अल्पमतीय सरकारों ने लिया। राज्य राजनीति में अस्थिरता, व्यापक दलबदल, केन्द्र–राज्य सम्बन्धों के विवाद आदि कारणों से राज्यों में अनुच्छेद 356 का प्रयोग किया गया।

वर्ष 1967 से वर्तमान समय तक राज्यों में आपातकाल की उद्घोषणा के अनेक अवसरों में से कुछ विवादास्पद भी रहें है। अनेक बार अनुच्छेद 356 का प्रयोग करते हुए सांवैधानिक परम्पराओं का दुरूपयोग भी किया गया। अनेक मामलों में अनुच्छेद 356 का प्रयोग सांवैधानिक प्रश्नों के स्थान पर दलीय हितों के लिए किया गया है। जैसे– 1973 में ओडिशा और उत्तर प्रदेश में आपातकाल की घोषणा, 1975 में गुजरात राज्य में राष्ट्रपति शासन के एक वर्ष पूर्ण होने के बाद भी सूखे के नाम पर राष्ट्रपति शासन की अवधि को 6 माह के लिए बढ़ाया जाना, 1977 में केन्द्र की तत्कालीन जनता सरकार तथा 1980 में केन्द्र की कांग्रेस सरकार द्वारा एक साथ 9 राज्यों की विधानसभाओं को भंग कर राष्ट्रपति शासन लागू किया गया। इसके अतिरिक्त 1989 में नागालैण्ड एवं कर्नाटक, 1990 में उत्तरप्रदेश, 1997 में बिहार एवं वर्ष 2005 में बिहार में, 2016 में अरूणाचल प्रदेश व उत्तराखंड में अनुच्छेद 356 का प्रयोग भी विवादास्पद रहा है।

नब्बे के दशक में अनुच्छेद 356 के दुरूपयोग को रोकने के लिए तथा संविधान द्वारा नियत मर्यादाओं का अनुपालन करते हुए राष्ट्रपति द्वारा अनुच्छेद 356 के तहत् राष्ट्रपति शासन लगाने से इनकार भी किया है। 21 अक्टूबर 1997 को उत्तरप्रदेश विधानसभा में विश्वास मत प्राप्त करने के बावजूद राज्यपाल रोमेश भण्डारी की रिपोर्ट के आधार पर केन्द्रीय मन्त्रिमण्डल ने अनुच्छेद 356 के तहत् विधानसभा भंग करके राज्य में राष्ट्रपति शासन लगाने की सिफारिश राष्ट्रपति को कर दी। संयुक्त मोर्चा सरकार के कुछ घटकों एवं कांग्रेस के दबाव के चलते ही केन्द्रीय मन्त्रिमण्डल ने यह निर्णय लिया। राष्ट्रपति के.आर. नारायणन ने केन्द्रीय मंत्रिमंडल की सिफारिश पर मंत्रिमंडल को एक बार अपने निर्णय पर पुनर्विचार करने को कहा। भारतीय लोकतन्त्र की रक्षा के लिए पहली बार राष्ट्रपति ने संविधान के अनुच्छेद 356 के तहत् राज्य सरकार को भंग करने के लिए केन्द्रीय मन्त्रिमण्डल के निर्णय को पुनर्विचार के लिए भेजा। सितम्बर 1998 में भी राष्ट्रपति के.आर.नारायण ने केन्द्रीय मन्त्रिमण्डल की बिहार में कानून व्यवस्था की विफलता के राज्यपाल के प्रतिवेदन के आधार पर राष्ट्रपति शासन लगाने की सिफारिश को पुनर्विचार के लिए वापिस भेज दिया। जिससे राष्ट्रपति शासन लागू नहीं हो पाये। इस प्रकार अनुच्छेद 356 के दुरूपयोग का सिलसिला निरन्तर जारी है लेकिन 44 वें संविधान संशोधन, केन्द्र–राज्य आयोगों की अनुशंसा एवं न्यायिक निर्णयों के पश्चात् इसमें कुछ कमी आई है। सरकारिया आयोग ने अनुच्छेद 356 के दुरूपयोग के सम्बन्ध में स्पष्ट किया है कि कुछ ही मामले ऐसे थे जिनमें राष्ट्रपति शासन को लागू करना अपरिहार्य माना जा सकता है।

अनुच्छेद 356 के दुरूपयोग से उत्पन्न राजनैतिक संकट

स्वतंत्रता के पश्चात् अनुच्छेद के दुरूपयोग से निम्नांकित संकट उत्पन्न हुए हैः–

संघीय ढाँचे पर कुठाराघात

किसी देश के संघवादी ढाँचे की सफलता केन्द्र एवं राज्यों के मध्य सहयोग एवं सामंजस्यपूर्ण सम्बन्धों पर निर्भर करती है। भारत के संघवाद में सशक्त केन्द्र के बावजूद राज्यों की अस्मिता एवं अस्तित्व को कायम रखते हुए सहयोगी संघवाद स्थापित करने के प्रावधान किये गए हैं। किन्तु अनुच्छेद 356 के दुरुपयोग से स्वतन्त्रता के बाद राज्यों में अनावश्यक एवं अनौचित्यपूर्ण राष्ट्रपति शासन की राजनीति ने भारत की संघात्मक व्यवस्था के स्वरूप को प्रभावित किया है। केन्द्र सरकार द्वारा राज्यपालों के माध्यम से बहुमत प्राप्त राज्य सरकारों के विरूद्ध प्रतिवेदन मंगवाकर अनुच्छेद 356 का दुरूपयोग करते हुए राज्यों में राष्ट्रपति शासन आरोपित करने को सम्बन्धित राज्य सरकारों ने 'संघीय मर्यादाओं के प्रतिकूल' बताया है। इससे केन्द्र–राज्य सम्बन्धों में टकराव उत्पन्न हुआ है तथा संघीय मर्यादाओं का हनन हुआ है। प्रो.के.वी. राव के अनुसार इसमें संदेह नहीं कि हमारे संविधान में अनेक संघीय लक्षण है लेकिन इस अनुच्छेद को उनमें सर्वोपरि कहा जा सकता है।

राज्यपाल की विवादास्पद भूमिका

अनुच्छेद 356 के दुरूपयोग ने राज्यपाल पद की भूमिका को विवादास्पद बना दिया है। राष्ट्रपति शासन की राजनीति ने राज्यपाल पद की गरिमा पर ही प्रश्न चिह्न लगा दिया है। राज्यपाल का पद केन्द्र सरकार के हाथों में एक राजनैतिक हथियार बन गया है। इस हथियार का प्रयोग केन्द्रीय सत्ता द्वारा प्रायः अपने से अलग दलों की राज्य सरकारों के खिलाफ किया जाता है। केन्द्र द्वारा ऐसे राज्यपालों की नियुक्ति की जाती है, जहाँ अनुच्छेद 356 के दुरूपयोग से राज्य सरकारों को बर्खास्त करवाया जा सके। स्वतन्त्रता के पश्चात् अनेक राज्यपालों की भूमिका जैसेः– श्री धर्मवीर, डॉ. सम्पूर्णानन्द, बी.एन.चक्रवर्ती, गोपाल रेड्डी, रोमेश भण्डारी, सिद्धार्थ शंकर राय, बूटा सिंह आदि द्वारा उक्त अनुच्छेद के दुरूपयोग के कारण विवादपूर्ण रही है। अनुच्छेद 356 के दुरूपयोग के कारण

ही राज्यपालों पर सांवैधानिक अध्यक्ष की तुलना में केन्द्र के अभिकर्ता की भूमिका का निर्वहन करने के आरोप लगाये गये हैं।

सांवैधानिक मर्यादाओं का हनन

अनुच्छेद 356 के दुरूपयोग से निर्वाचित एवं बहुमत प्राप्त राज्य सरकारों को केन्द्र द्वारा बर्खास्त करना संविधान विरूद्ध है। धारा 356 के दुरूपयोग का उल्लेखनीय तथ्य यह है कि इस अनुच्छेद द्वारा केन्द्र में सत्तारूढ़ राजनीतिक दलों द्वारा राज्यों की विपक्षी राजनीतिक दलों की सरकारों को अपदस्थ करने के लिए ही नहीं वरन् उन राज्यों की सरकारों को भी अपदस्थ किया है जिसमें अपने ही दल की सरकार थी, किन्तु जो केन्द्रीय सरकार के अनुकूल नहीं थी। सत्तारूढ़ केन्द्रीय दल द्वारा राज्यों की सरकारों को बर्खास्त करने से सांवैधानिक गतिरोध उत्पन्न होने के साथ–साथ लोकतान्त्रिक संकट भी उत्पन्न हो जाता है। इससे राज्य सरकारों में सदैव यह भय बना रहता है। कि यदि केन्द्र की सरकार के साथ संघर्षपूर्ण राजनीति का सहारा लिया तो उन्हें अपने पद से हटा दिया जाएगा।

राजनीतिक स्वार्थ एवं संघर्ष

अनुच्छेद 356 के दुरूपयोग से देश की राजनीति में अनावश्यक तनावों का जन्म हुआ है। राज्यों में सांवैधानिक तन्त्र की विफलता के आधार पर राष्ट्रपति शासन लागू करने की प्रवृत्ति ने राज्यों में गुटबन्दी, दलबदल, केन्द्र–राज्य सम्बन्धों में अविश्वास एवं राजनीतिक स्वार्थपरता को बढ़ावा दिया है। इससे नवीन राजनीतिक तनावों का जन्म हुआ है। राज्यों में राष्ट्रपति शासन के अनेक मामलों में राज्यपालों पर दबाव डालकर अनुच्छेद 356 के अधीन राष्ट्रपति शासन लागू करने की रिपोर्ट मांगी गयी थी। उक्त धारा के दुर्भावनापूर्वक एवं असम्बद्ध आधारों पर प्रयोग से राज्य राजनीति में राजनीतिक गतिरोध व गुटबन्दी को बढ़ावा मिला है तथा राजभवनों की गरिमा का ह्रास हुआ है।

संघीय कार्यपालिका की शक्तिशाली भूमिका

अनुच्छेद 356 में प्रयुक्त पदावली 'राज्यपाल से प्रतिवेदन पर अन्यथा' से यह स्पष्ट है कि राष्ट्रपति राज्य के राज्यपाल के कोई प्रतिवेदन न मिलने पर कार्यवाही कर सकता है। इसके लिए केवल इतना ही पर्याप्त है कि राष्ट्रपति को इस बात का समाधान हो कि किसी राज्य में सांविधानिक तन्त्र विफल हो गया है। अनुच्छेद 356 से यह स्पष्ट है कि राष्ट्रपति का समाधान मन्त्रिमण्डल का समाधान होता है, स्वयं राष्ट्रपति का समाधान नहीं। अनुच्छेद 356 के दुरूपयोग से राज्यों की निर्वाचित सरकारों को बर्खास्त करवाने के केन्द्र के अनुच्छेद 356 के दुर्भावनापूर्ण प्रयोग से संघीय सरकार पर तानाशाही के आचरण के आरोप लगते हैं।

राजनीतिक हित प्राप्ति हेतु दुरूपयोग

स्वतंत्रता के पश्चात् राजनीतिक दलों द्वारा अनुच्छेद 356 के अन्तर्गत संकटकालीन घोषणा का अनावष्यक प्रयोग कर राजनैतिक स्वार्थों की प्राप्ति की गई है। 1959 में केरल के साम्यवादी मंत्रिमण्डल को पदच्युत करना, 1977 में 9 राज्यों की सरकारों को 356 के प्रयोग से हटाना तथा 1980 में पुनः 9 राज्यों की सरकारों को सही प्रतिनिधित्व न कर पाने के अभियोग से हटाना– सभी उदाहरण दरअसल केन्द्र व सत्तारूढ़ दल द्वारा राज्यों में अन्य दलों की सरकारों को पदच्युत करने के है। प्रो.एस.आर.माहेश्वरी के अनुसार अनुच्छेद 356 देश की राजनीतिक एवं प्रशासनिक प्रक्रिया का एक अन्तरंग भाग संभवतः इसका मानस बन गया है।

स्पष्ट है कि अनुच्छेद 356 के दुरूपयोग से राजनीतिक संकट के साथ–साथ संसदीय शासन व्यवस्था एवं संघीय ढांचे पर भी प्रहार हुआ है।

अनुच्छेद 356 के दुरूपयोग पर नियन्त्रण के प्रयास एवं सुझाव

अनुच्छेद 356 के दुरूपयोग को रोकने के लिए सर्वोच्च न्यायालय ने समय–समय पर सुझाव दिये हैं। संविधान के 44 वें संशोधन, सरकारिया आयोग की अनुशंसाओं तथा एस. आर. बोम्मई बनाम भारत संघ वाद के मामले में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिये गए निर्णय से अनुच्छेद 356 के आधारहीन उपयोग को सीमित करने का प्रयास किया है।

44 वां संविधान संशोधन अधिनियम, 1978

इस संशोधन अधिनियम ने अनुच्छेद 356 के क्षेत्र को सीमित कर दिया है। यह सीमांकन निम्नानुसार हुआ है–

1. मूल रूप से धारा 356 में यह कहा गया है कि ऐसी उद्घोषणा राष्ट्रपति के 'समाधान' के आधार पर की जाती है। 42 वें संविधान संशोधन 1976 द्वारा अनुच्छेद 356 में एक परन्तुक जोड़कर यह स्पष्ट कर दिया गया था कि राष्ट्रपति के समाधान को लेकर न्यायालय में चुनौती नहीं दी जा सकती थी, किन्तु 44 वें संविधान संशोधन द्वारा इस परन्तु को निकाल दिया गया है। इसके परिणामस्वरूप इस मामले में राष्ट्रपति के समाधान का न्यायिक पुनरावलोकन किया जा सकता है, अर्थात यदि उद्घोषणा दुर्भावना से प्रेरित होकर की गई है, उसमें उल्लेखित कारणों का राष्ट्रपति के समाधान से कोई युक्तियुक्त सम्बन्ध नहीं है तो न्यायालय उसे असांवैधानिक घोषित कर सकते हैं।
2. 44 वें संविधान संशोधन द्वारा ही आपात की उद्घोषणा के सम्बन्ध में प्रावधान किया गया कि ससंद द्वारा अनुमोदित हो जाने पर आपात उद्घोषणा 6 माह तक प्रवर्तन में रहेगी। एक बार में इस अवधि को 6 माह के लिए बढ़ाया जा सकता है। संशोधन अधिनियम ने एक नया खण्ड (5) जोड़कर यह उपबन्धित किया है कि 1 वर्ष से अधिक अवधि के लिए आपात को जारी रखने वाला संकल्प किसी भी सदन द्वारा तब तक पारित नहीं किया जा सकता जब तक चुनाव आयोग इस सम्बन्ध में प्रमाण–पत्र न दे दे कि वहाँ वर्तमान में चुनाव करवाना संभव नहीं है। इस प्रावधान के पूर्व सरकार बिना किसी कारण के इस अवधि को बढ़ाकर अधिकतम तीन वर्ष तक देती थी।

सरकारिया आयोग की सिफारिशें

केन्द्र–राज्य सम्बन्धों को सुचारू बनाने हेतु सुझाव देने के लिए गठित सरकारिया आयोग ने अनुच्छेद

356 के प्रयोग के लिए निम्नलिखित सिफारिशें की हैं यथा–

1. अनुच्छेद 356 का प्रयोग अन्तिम विकल्प होना चाहिए। कार्यवाही करने से पूर्व ऐसे राज्यों को चेतावनी देनी चाहिए। यह उन दशाओं में लागू नहीं होगा, जहाँ कार्यवाही न करने के विनाशकारी परिणाम हो सकते हैं।
2. राज्य की विधानसभाओं को भंग नहीं किया जाना चाहिए। इसके लिए अनुच्छेद 356 में समुचित संशोधन किया जाना चाहिए।
3. सारवान तत्व और आधार उद्घोषणा के अन्तिम भाग बना देने चाहिए।
4. अनुच्छेद 356 के खण्ड (5) में उपखण्ड (क) और (ख) के बीच प्रयुक्त शब्द 'और' के स्थान पर 'अथवा' शब्द रखा जाना चाहिए।

न्यायालय के निर्णय

न्यायालय ने अपने निर्णयों में इस तथ्य को स्वीकार किया है कि अनुच्छेद 356 का प्रयोग दुर्भावनापूर्वक या असम्बद्ध आधारों पर नहीं किया जाना चाहिए। राजस्थान राज्य बनाम भारत संघ के मामले में उच्चतम न्यायालय ने अनुच्छेद 356 के मर्यादित प्रयोग को स्वीकारा है।

यद्यपि सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों ने समय–समय पर दिये गये अपने निर्णयों में राष्ट्रपति की अनुच्छेद 356 के अन्तर्गत लागू की गई उद्घोषणा को वैध करार दिया है, किन्तु मध्यप्रदेश उच्च न्यायालय ने सुन्दरलाल पटवा बनाम भारत संघ के अपने ऐतिहासिक निर्णय में 1992 में अनुच्छेद 356 का प्रयोग कर बर्खास्त मध्यप्रदेश की तत्कालीन भारतीय जनता पार्टी की सुन्दरलाल पटवा सरकार के निर्णय को अनुचित माना। उच्च न्यायालय ने इस मामले में अनुच्छेद 356 द्वारा मध्यप्रदेश में राष्ट्रपति शासन लागू करने वाले आदेश को 'अवैध आदेश' माना। तत्कालीन केन्द्र सरकार ने जबलपुर उच्च न्यायालय के उक्त निर्णय के विरोध में सर्वोच्च न्यायालय में अपील की। सर्वोच्च न्यायालय ने उच्च न्यायालय के निर्णय को उलट दिया। इस बीच मध्यप्रदेश में निर्वाचन करवाकर नवीन सरकार का गठन किया गया। अतः उच्चतम न्यायालय के निर्णय का मात्र औपचारिक महत्व ही रह गया।

एस.आर.बोम्मई बनाम भारत संघ

राष्ट्रपति शासन से सम्बन्धित संवैधानिक महत्व का मामला एस.आर.बोम्मई बनाम भारत संघ का था। इस न्यायिक निर्णण में अनुच्छेद 356 के न्यायिक पुनरावलोकन से सम्बन्धित महत्वपूर्ण निर्णय देते हुए अनुच्छेद 356 के प्रयोग से सम्बन्धित महत्वपूर्ण मानदण्ड निर्धारित किये गए हैं। 44 वें संविधान संशोधन से पूर्व तक अनुच्छेद 356 के तहत् की गई उद्घोषणा के औचित्य को न्यायिक पुनरावलोकन के दायरे से बाहर रखा गया था, किन्तु 44 वें संशोधन के बाद यह विधि बना दी गयी है कि यदि यह उद्घोषणा दुर्भावनावश की गई हो तो न्यायालय हस्तक्षेप कर सकता है। एस.आर.बोम्मई वाले मामले में उच्चतम न्यायालय के 9 न्यायाधीशों की पीठ ने ये निर्धारित किया है कि अनुच्छेद 356 के अधीन राष्ट्रपति द्वारा राज्यों में राष्ट्रपति शासन लागू करने के लिए की गई उद्घोषणा न्यायिक पुनरावलोकन के अधीन है और राष्ट्रपति के समाधान के लिए युक्तियुक्त कारणों का होना एक पूर्ववर्ती शर्त है। न्यायालय इसकी जाँच कर सकते हैं कि क्या ऐसे कारण विद्यमान थे जिनके आधार पर राष्ट्रपति ने उद्घोषणा की थी? उच्चतम न्यायालय ने राष्ट्रपति शासन लागू करने के सम्बन्ध में जो विषिष्ट मानदण्ड निर्धारित किये हैं जिनका पालन करना केन्द्र सरकार के लिए अनिवार्य है, वे निम्नलिखित हैं–

1. अनुच्छेद 356 के अधीन राष्ट्रपति द्वारा किसी राज्य में राष्ट्रपति शासन लागू करने और विधानसभा के भंग करने की शक्ति 'सशर्त' है, असीमित नहीं। और उसे यह दिखाना होगा कि अनुच्छेद 356 (1) के अधीन ऐसी परिस्थितियाँ अस्तित्व में थीं, जिसके आधार पर राष्ट्रपति ने कार्यवाही की है।
2. राष्ट्रपति शासन राज्यपाल के लिखित प्रतिवेदन के बिना लागू नहीं किया जा सकता है।
3. 'पंथ निरपेक्षता' भारतीय संविधान का आधारभूत ढाँचा है और यदि कोई सरकार उसके आदर्शों के विरूद्ध कार्य करती है तो वहाँ अनुच्छेद 356 का प्रयोग किया जा सकता है।
4. विपक्ष द्वारा शासित सभी सरकारों को एक साथ पदच्युत नहीं किया जा सकता है।
5. यदि केवल राजनीतिक आधारों पर दुर्भावना से प्रेरित होकर राष्ट्रपति शासन लागू किया जाता है तो न्यायालय विधानसभा को पुनर्जीवित कर सकता है।
6. राष्ट्रपति शासन लागू करना और विधानसभा को भंग करना–दोनों एक साथ नहीं किया जा सकता है। राष्ट्रपति संसद द्वारा उद्घोषणा के अनुमोदित किए जाने के पश्चात् ही विधानसभा को भंग कर सकता है। जब तक ऐसा अनुमोदन नहीं हो जाता है राष्ट्रपति विधानसभा को केवल निलम्बित कर सकता है।
7. उच्चतम और उच्च न्यायालय केन्द्र सरकार को अनुच्छेद 74 (2) के बावजूद उस सामग्री को बताने के लिए बाध्य कर सकता है जिसके आधार पर किसी राज्य में राष्ट्रपति शासन लागू करने का परामर्श केन्द्रीय मन्त्रिपरिषद् राष्ट्रपति को देता है। 'सामग्री' परामर्श का भाग नहीं हैं, अतः न्यायालय उसकी जाँच कर सकता है।

उच्चतम न्यायालय द्वारा उक्त निर्णय से अनुच्छेद 356 के दुरूपयोग पर नियन्त्रण लगाने के लिए महत्वपूर्ण मानदण्ड स्थापित किये गए हैं। अनुच्छेद 356 के अधीन किसी राज्य में राष्ट्रपति शासन दुर्भावना से प्रेरित होकर राजनीतिक आधारों पर लागू किया जाता है तो न्यायालय उसे अवैध घोषित कर सकता है। न्यायालय के द्वारा निर्धारित किये गए उक्त मार्गदर्शक सिद्धान्तों के उपरान्त अनुच्छेद 356 के राजनीति से प्रेरित होकर किये गए प्रयोग पर कुछ हद तक रोक लगी है। किन्तु एस. आर. बोम्मई मामले में विहित सिद्धान्तों का सदैव पालन नहीं किया गया। 1995 में उत्तर प्रदेश में राष्ट्रपति शासन आरोपित करते समय संसद के बिना अनुमोदन के केन्द्र के निर्देश पर राज्यपाल ने विधानसभा को भंग किया।

अक्टूबर 1996 में उत्तर प्रदेश विधानसभा चुनावों में किसी राजनीतिक दल को बहुमत न मिलने पर राज्यपाल के प्रतिवेदन पर लगाया गया राष्ट्रपति शासन बोम्मई के मामले में विहित सिद्धान्तों के विपरीत था, जिसमें न्यायालय ने निर्णय दिया था कि ऐसी स्थिति में सर्वप्रथम सबसे बड़े राजनैतिक दल को सरकार बनाने का अवसर देना चाहिए।

एस.आर.बोम्मई बनाम भारत संघ के निर्णयों में अधिकथित सिद्धान्तों का प्रयोग करते हुए अनुच्छेद 356 के अनावश्यक एवं अवैधानिक प्रयोग को रोका भी गया है। इसके उदाहरण हैं– 1997 में उत्तर प्रदेश एवं 1998 में बिहार में राष्ट्रपति शासन की सिफारिशों को भारत के पूर्व राष्ट्रपति के.आर.नारायण द्वारा पुनर्विचार के लिए लौटाया जाना यह इंगित करता है कि अब अनुच्छेद 356 का मनमाने ढंग से प्रयोग नहीं किया जा सकता है। रामेश्वर प्रसाद बनाम भारत संघ (2006) का एक अन्य महत्वपूर्ण मामला है जिसमें न्यायालय ने अनुच्छेद 356 के अधीन राष्ट्रपति शासन को लागू करना और विधानसभा को भंग करना मनमानापूर्ण एवं भेदभावपूर्ण माना था क्योंकि राज्यपाल ने विपक्ष द्वारा अवैध तरीके से बहुमत बनाने के कथित प्रयासों के समाचार के आधार पर अपना प्रतिवेदन भेज दिया था। न्यायालय ने विहित किया कि राज्यपाल को अपने निर्णय को प्रमाणित करने के लिए सम्बद्ध सामग्री संलग्न करना चाहिए।

राज्यों में राष्ट्रपति शासन लागू करने की राजनीति ने धारा 356 के प्रयोग को विवादास्पद बनाया है। इस अनुच्छेद का राजनीतिक के स्थान पर सांवैधानिक एवं मर्यादित प्रयोग किया जाना अपरिहार्य है।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः यही कहा जा सकता है कि राज्यों में राष्ट्रपति शासन लागू करने का विषय प्रारम्भ से ही विवादास्पद रहा है तथा निकट भविष्य में भी इससे सम्बद्ध पक्षों की भावना के शुद्ध नहीं होने की स्थिति में ऐसा ही बने रहने की सम्भावना है।

राज्यों में राष्ट्रपति शासन के विस्तृत विवेचन तथा विष्लेषण के बाद यह भलीभाति स्पष्ट हो जाता है कि इसके कारण भारत की संसदीय शासन व्यवस्था में अनेक तनाव तथा संघर्ष की स्थितियाँ उपस्थित हुई हैं।

समय–समय पर केन्द्र तथा राज्य सरकारों द्वारा गठित–राजमन्नार समिति, राज्यपाल समिति, सहकारिया आयोग तथा संविधान समीक्षा आयोग ने भी राष्ट्रपति शासन के प्रावधान को बनाए रखने के पक्ष में तो अपनी अनुशंसा की हैं, लेकिन इसके दुरूपयोग को रोकने के बारें में भी अनेक उपयोगी सिफारिशें की है। इन सिफारिशों का व्यवहार में उपयोग करके सार्थक निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं तथा अनावश्यक विवादों से बचा जा सकता है।

राष्ट्रपति शासन से जुड़े हुए विविध सांवैधानिक पक्षों पर विचार करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि इसका सार्थक तथा सकारात्मक दृष्टि से प्रयोग तभी सम्भव है, जबकि इससे जुड़ी हुई संस्थाओं की भूमिका उद्देश्यपरक तथा उत्तरदायी हो। जब तक इन संस्थाओं द्वारा अनुच्छेद–356 का दुरूपयोग करने की मानसिकता से कार्य किया जाता रहेगा, तब तक चाहे कितनी समितियाँ तथा आयोग कितनी ही अच्छी सिफारिशें क्यों न कर दें, इसका दुरूपयोग नहीं रोका जा सकेगा। इस दुरूपयोग को रोकने में जहाँ सांवैधानिक गारन्टी की महत्वपर्ण भूमिका हैं, उससे भी अधिक महत्व ''राजनीतिक संस्थाओं की भावना, नेकनीयता तथा आचरणगत शुद्धता'' से है। इसके लिए केन्द्रीय मन्त्रिपरिषद् की कार्य–शैली में गुणात्मक सुधार लाना होगा। राष्ट्रपति से भी सार्थक तथा व्यावहारिक भूमिका की अपेक्षा है। राज्यपालों को भी इस सांवैधानिक प्रावधानों को सुस्पष्ट रूप से प्रयोग करने की दिशा में आवष्यक दिशा–निर्देशों का पालन करना चाहिए। साथ ही मुख्यमन्त्रियों का विवेक–सम्मत आचरण भी इस समस्या का सही निदान कर सकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *जैन, धर्मचन्द, राज्यों में राष्ट्रपति शासनः एक विश्लेषणात्मक अध्ययन, आर.बी.एस.ए. पब्लिशर्स, जयपुर, 2004, पृष्ठ 29.*
2. *जौहरी, जे.सी, इण्डियन गवर्नमेंट एण्ड पॉलिटिक्स, 1985, पृष्ठ 844.*
3. *कष्यप, सुभाष, दल–बदल और राज्यों की राजनीति, मिनाक्षी प्रकाशन, मेरठ, 1970, पृष्ठ 323.*
4. *कश्यप, सुभाष, सांवैधानिक–राजनीतिक व्यवस्था, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 2016 पृष्ठ 159.*
5. *लक्ष्मीकांत, एम., भारत की राजव्यवस्था, मैकग्रा हिल्स एजुकेशन, न्यूयॉक्र, 2016 पृष्ठ 18.*
6. *मोहन, सुरेन्द्र, सत्ता का मद या राष्ट्रहित, राजस्थान पत्रिका, जयपुर, दिसम्बर 20,1988 पृष्ठ 4.*
7. *नारायण, इकबाल, स्टेट पॉलिटिक्स इन इण्डिया, मिनाक्षी प्रकाशन, मेरठ, 1967, पृष्ठ 141.*
8. *पाण्डेय, जय नारायण, भारत का संविधान, सेन्ट्रल लॉ एजेन्सी, 2017, पृष्ठ 25.*
9. *राजस्थान पत्रिका, जयपुर, अक्टूबर 20,1991, पृष्ठ 1.*
10. *राजस्थान पत्रिका, जयपुर, मार्च 7, 1998, पृष्ठ 1.*
11. *सईद, एस. एम., भारतीय राजनीतिक व्यवस्था, भारत बुक सेंटर, लखनऊ, 2009, पृष्ठ 224.*